इकाई 1 अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान का इतिहास*

इकाई की रूपरेखा

1.0 परिचय

1.1 अनुप्रयुक्त मानवविज्ञानः संकल्पना

1.2 अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान का ऐतिहासिक विकास

1.3 भारत में अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान

1.4 सारांश

1.5 संदर्भ

1.6 आपकी प्रगति की जाँच के लिए उत्तर

अधिगम के परिणाम

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत विद्यार्थी सक्षम होंगेः

- अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान को परिभाषित करने में;
- अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान के विकास की व्याख्या करने में;
- भारत में अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान का अभ्यास किस प्रकार किया जाता है, इस बात को स्पष्ट करने में; तथा
- एक अनुप्रयुक्त मानव विज्ञानी की विभिन्न भूमिकाओं की पहचान करने में।

1.0 परिचय

जब से रेने देकार्त ने सत्रहवीं शताब्दी में अपने प्रसिद्ध ग्रंथ *डिसकोर्स ऑन मेथड्स* में सिद्धान्त एवं अभ्यास के बीच भेद स्पष्ट किया है, तब से सभी विषय व्यापक आधार पर सैद्धांतिक एवं व्यवहारिक स्वरूप में विभाजित हो गए हैं। किसी सिद्धान्त अथवा 'प्रक्रियाओं की एक श्रृंखला को समझने के लिए वस्तुनिष्ठ ज्ञान की एक व्यवस्थित प्रणाली' अपने व्यवहारिक स्वरूपों के साथ निकटता से जुड़ी होती है। अर्थात वे एक दूसरे से पोषित होते हैं। जब एक सिद्धांत को इसके अनुप्रयोग द्वारा परिष्कृत किया जाता है तब वह संशोधित सिद्धांत इन द्वंद्वात्मक तरीके से व्यवहारिक(अनुप्रयुक्त) पहलुओं को और समृद्ध करता है। इस संबंध में मानवविज्ञान विषय भी कोई अपवाद नहीं है, अन्य विषयों की तरह इसके भी सैद्धांतिक और व्यवहारिक ज्ञान के पहलू हैं। कुछ विषयों जैसे भौतिकी अथवा मनोविज्ञान में, यह विभाजन निष्पक्ष रूप से इस अर्थ में चिन्हित किया है कि वहाँ पर विभिन्न विभाग एवं स्थान निश्चित किए गए हैं जहां पर ज्ञान का सृजन होता है और उसे व्यवहारिक बनाया जाता है।

उदाहरण के लिए, बहुत से विश्वविद्यालयों में अनुप्रयुक्त मनोविज्ञान अथवा अनुप्रयुक्त भू–विज्ञान जैसे विभाग होते हैं। इतनी स्पष्टता के साथ मानव विज्ञान के विषय में ऐसा नहीं किया गया है जहां पर सैद्धांतिक एवं व्यवहारिक मानव विज्ञान में भेदों की

*योगदानकर्ता– प्रो.आर.पी. मित्रा, मानव विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

तुलना में समानताएं अधिक हैं और दोनों एक दूसरे में अंतर्निहित हैं। कुछ मानव विज्ञानी जैसे मार्गरेट मीड कहती हैं "सम्पूर्ण मानव विज्ञान व्यवहारिक है"(1975:13)। यह भारतीय मानव विज्ञान के विषय में और भी सटीक बैठता है। एक मानवविज्ञानी एकही समय पर संदर्भ के आधार पर व्यवहारिक मानवविज्ञानी भी हो सकता है और 'सैद्धांतिक मानव विज्ञानी' भी।जैसे-जैसे हम इस इकाई में आगे बढ़ेंगे, इसका कारण और अधिक स्पष्ट होता जाएगा। अब हम इस बात के साथ प्रारम्भ करते हैं कि अनुप्रयुक्त या व्यवहारिक(एप्लाइड)मानवविज्ञान है क्या।

1.1 अनुप्रयुक्त मानवविज्ञानः संकल्पना

अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान को उस मानव विज्ञान के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसका उपयोग समस्या का समाधान करने के लिए किया जाता है। यह उपयोग में लाया जा रहा मानव विज्ञान है। मालिनोवस्की, जो कि आधुनिक मानव विज्ञान के जनक थे, ने अपने लेख 'प्रैक्टिकल एंथ्रोपोलॉजी' (1929) की प्रस्तावना में लिखा कि सभी विज्ञान अपनी उपयोगिताओं के साथ अस्तित्त्व में आए तथा मानव विज्ञान के विषय में भी यही हुआ है। उन्होंने स्वदेशी(देशज) लोगों की स्थिति और औपनिवेशिक सरकार द्वारा उनके कुशल प्रशासन को समझने में मानवशास्त्रीय ज्ञान के अनुप्रयोग की पुरजोर वकालत की। उन्होंने इसे प्रायौगिक मानवविज्ञान के रूप में संदर्भित किया। प्रायौगिक मानव विज्ञान एक ऐसा विषय है जो सैद्धांतिक मानव विज्ञान एवं इसकी उपयोगिताओं के बीच एक सेतु का काम करता है। मानव वैज्ञानिक सामाजिक सम्बन्धों, व्यवहार अथवा सांस्कृतिक प्रणालियों को प्रभावित करते हुए इसके प्रभाव के अर्थ में अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान के बारे में बात करते रहे हैं।

1941 में, मार्गरेट मीड, इलियट स्मिथ एवं अन्य जिन्होने मिलकर सोसाइटी ऑफ अप्लाइड एंथ्रोपोलोजी की स्थापना की, जो कि अनुप्रयुक्त मानव विज्ञानियों की सर्वाधिक मान्यताप्राप्त व्यावसायिक संस्था है। इसने अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान को निम्न रूप से परिभाषित कियाः

'मानव सम्बन्धों की वास्तविक अंतर्विषयी समस्याओं के समाधान के लिए वैज्ञानिक जांच के माध्यम से मानव वैज्ञानिक दृष्टिकोणों का प्रयोग'। अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान की परिभाषा को एक विज्ञान के रूप में बल देती है जो निम्नलिखित बिंदुओं को इंगित करती हैः

अ) स्थानः उन्होंने अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान को अंतर्विषयी टीम के एक भाग के रूप में पहचान की जहां पर मानव विज्ञानी दूसरे अन्य विषयों के विशेषज्ञों के साथ मिलकर काम करते हैं।

ब) केंद्रः उनके लिए अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान मानव सम्बन्धों को समझने और उनका विश्लेषण करने तथा कैसे यह किसी सामाजिक समस्या का समाधान करने में सहायक हो सकता है, से संबन्धित है।

चार्ल्स विंक ने, मानव विज्ञान के प्रारम्भिक शब्दकोशों में अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान को 'मानव वैज्ञानिक ज्ञान' के रूप में परिभाषित किया। उन्होंने अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान को निम्न रूप में परिभाषित कियाः

"वह समूह जिसके लिए मानव विज्ञानी काम कर रहा है, उस समूह की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए मानव वैज्ञानिक ज्ञान का प्रयोग करना। इसमें परामर्श देना, प्रशासन अथवा निर्देश देना सम्मिलित हो सकता हैं"। (1958:28)

जॉर्ज फॉर्स्टर ने, जो कि अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान की प्रारम्भिक पुस्तकों में से एक के लेखक है, 1969 में इसे मानव विज्ञानियों की उन व्यावसायिक गतिविधियों के रूप में परिभाषित करते हैं जो कि प्राथमिक रूप से मानव व्यवहार में किसी सामाजिक, आर्थिक अथवा कोई तकनीकी समस्या का समाधान करने के लिए परिवर्तनों से जुड़ी हैं। फॉस्टर के लिए अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान मानव वैज्ञानिक सिद्धांतों की तुलना में समस्याओं के समाधान से अधिक जुड़ा है (1969:54)। उनके द्वारा दी गयी परिभाषा की अनेकों आलोचनाओं में से एक है इसका सीमित दायरा, जो अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान को मात्र 'परिवर्तन परिस्थिति' का ही अध्ययन करने तक सीमित रखता है।

वेन विलिगन, सर्वाधिक जाने–माने अनुप्रयुक्त मानव विज्ञानियों में से एक हैं जो सांस्कृतिक प्रणालियों पर पड़ने वाले प्रभाव के अर्थ में अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान को परिभाषित करते हैं। उनके अनुसार अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान "सम्बद्ध, शोध–आधारित, सहायक विधियों का एक मिश्रण है, जो किसी विशेष सांस्कृतिक प्रणालियों में आंकड़ों के प्रावधान, प्रत्यक्ष कार्रवाही, तथा/अथवा नीति के निर्माण के द्वारा परिवर्तन अथवा स्थिरता उत्पन्न करता है। यह प्रक्रिया समस्या, मानव विज्ञानी की भूमिका, प्रेरक मूल्य तथा कार्रवाही में भागीदारी के विस्तार के अर्थ में अनेकों रूप धारण कर सकती है" (2002:11)।

अपनी प्रगति जांचें

1) अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान को परिभाषित करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान में परिवर्तन के विभिन्न केंद्र बिन्दु वाले क्षेत्र कौन से हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

1.2 अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान का ऐतिहासिक विकास

अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान का इतिहास और विकास एक अकादमिक अनुशासन के रूप में मानवविज्ञान के विकास से निकटता से जुड़ा हुआ है और अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान अपने प्रारंभ से ही मुख्यधारा के मानवविज्ञान का एक भाग रहा है। एक विषय के रूप में

मानव विज्ञान का उद्भव उन्नीसवीं शताब्दी में मानव क्रमिक–विकास को अपना केन्द्रीय चिंतन विषय चुनने से आरंभ हुआ (इंगोल्ड 1994:XIV)। 'प्रगतिशील क्रमिक–विकास सिद्धान्त' पहली व्यापक रूपावली थी जिसने मानव विज्ञान के एक अलग विषय के विकास को वैधता प्रदान की। इसका केन्द्रीय चिंतन विषय मानवजाति का जैविक एवं सांस्कृतिक क्रमिक–विकास का इतिहास था। उनके लिए समसामयिक पाश्चात्य सभ्यता प्रगतिशील परिवर्तन प्रक्रिया का अंतिम पड़ाव था जिसके दौरान सामाजिक व्यवस्थापन विभिन्न पड़ावों से गुज़रा। अफ्रीका, एशिया,ओशिनिया तथा दक्षिण एवं उत्तरी अमरीका के आदिवासी एवं मूल समुदायों को इन भूतपूर्व रूपों के प्रतिनिधि के रूप में देखा गया। इसलिए, उन्हे 'प्राचीन समाजों' एवं उनकी संस्कृति को 'प्राचीन संस्कृति' का नाम दिया गया। मानव विज्ञान का उद्देश्य मानवजाति का इतिहास एवं सामाजिक व्यवस्थापन के प्रारम्भिक रूपों के बारे में जानने के लिए उनका अध्ययन करना था। अतः मानव विज्ञान एक अन्वेषण के रूप में उसे समझने के लिए आरंभ हुआ, जिसे यूरोपियन–अमेरीकन विद्वानों ने 'अन्य संस्कृतियों' के रूप में संदर्भित किया था। भौतिक मानवविज्ञान मानव के क्रमिक–विकास के जैविक पहलू को समझने और पुरातात्त्विक मानवविज्ञान इन संस्कृतियों के प्रागैतिहासिक पहलू को समझने के लिए एक अन्वेषण था। हालांकि समसामयिक प्राचीन समुदायों, जैविक एवं सामग्री आधारित संस्कृति अवशेषों के अध्ययन द्वारा इतिहास की पुनर्रचना मानव विज्ञान के व्यापक अधिदेश थे, यह कबीलों एवं स्वदेशी समुदायों के मानव वैज्ञानिक लेखा–जोखा ही था जिसके कारण उन्हे मान्यता मिली एवं अन्य द्वारा सम्मान मिला। बार्नेट के अनुसार, अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान का प्रारम्भ 19वीं शताब्दी के अंतिम दशकों के दौरान संयुक्त राष्ट्र एवं इंग्लैंड में हुआ। प्रयोग का पहला क्षेत्र कबीलों पर अध्ययन तथा मानव वैज्ञानिक अंतर्दृष्टि का उपयोग था जो 'कबीलों एवं स्वदेशी लोगों का प्रबंधन करने के लिए औपनिवेशिक प्रशासकों' द्वारा किया गया था। हम अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान के इतिहास को चार विभिन्न चरणों में उन्हीं में अंतर्निहित उपविभाजनों के द्वारा विभाजित कर सकते हैं।

क) अनुप्रयुक्त नृजातिविज्ञान (एथनोलॉजी) अवस्था

यह ब्रिंटन नामक एक अमेरिकी मानवविज्ञानी थे, जिन्होंने पहली बार देशज समुदायों के प्रबंधन के लिए 1896 की शुरुआत में अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान की बात की थी (फोस्टर 1969:198)। बहुधा अपनी भलाई को भी दांव पर लगाते हुए,देशज अमीरिंडियन लोगों के तीव्र आत्मसातकरण से इस बात का आभास किया गया कि उनकी सम्पूर्ण पहचान एवं उनके सांस्कृतिक विलोपन की अत्यंत संभावना थी। 1879 में, संयुक्त राज्य सरकार ने देशज अमीरिंडियन लोगों के मामलों का प्रबंधन करने के बारे में जानकारी एकत्रित करने के लिए *ब्यूरो ऑफ एथ्नोलोजी* की स्थापना की (बेन्नेट 1994:25)। इस ब्यूरो ने, संघीय सरकार को अमेरिकन जीवन शैली में क्रमिक ढंग से आत्मसात होने की प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाने और सुधार कार्य एवं परिवर्तन लाने का परामर्श देने के लिए मानव विज्ञानियों को सेवारत किया। मानव वैज्ञानिक ज्ञान की मांग इन समुदायों से तीव्रता के साथ विलिप्त होते रीति–रिवाजों, परम्पराओं एवं सामाजिक प्रथाओं के दस्तावेजीकरण के लिए भी बढ़ी (पूर्वोक्तः 27)। अतः अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान की शुरुआत स्वदेशी क्षेत्रों में सार्वजनिक प्रशासन के एक साधन तथा इन समुदायों की विलुप्त हो रही सांस्कृतिक प्रथाओं के दस्तावेजीकरण करने के एक सहायक मानव विज्ञान के रूप में हुई। उन्नीसवीं के उत्तरार्ध एवं बीसवीं शताब्दी

के पूर्वार्ध में ब्यूरो ऑफ एथ्नोलोजी के जैसी ही भूमिका ब्रिटिश साम्राज्य के औपनिवेशिक कार्यालय ने भी निभाई थी।उपनिवेशी प्रशासन की सहायता के लिए अफ्रीका और एशिया के विभिन्न हिस्सों में जनजातियों के विशेषज्ञ के रूप में मानवविज्ञानी की सेवाएं ली गईं(पूर्वोक्तः27)। मूनी ने इस कालावधि को अनुप्रयुक्त नृजाति विज्ञान से संबोधित किया (फेरारो एवं अंद्रियत्ता 2014:55)। रैडक्लिफ–ब्राउन ने दक्षिण अफ्रीका के केपटाउन विश्वविद्यालय में 'स्कूल ऑफ अफ्रीकन स्टडीज' की स्थापना की। स्कूल का प्राथमिक उद्देश्य स्वदेशी लोगों और श्वेत उपनिवेशवादियों के बीच संबंधों में सुधार करना था। मलिनोवस्की ने भी इस बात की वकालत की कि मानव विज्ञानियों को औपनिवेशिक प्रशासकों की कार्यकुशलता में सुधार लाने के लिए काम करना चाहिए। उन्होंने इसे प्रायौगिक मानव विज्ञान का नाम दिया जैसा कि ऊपर पहले ही उल्लेख किया जा चुका है (ओ'ड्रिसकोल 2009:14)।

ख) अनुप्रयुक्त नृजाति विज्ञान एवं उपनिवेशवाद

अब यह पूर्ण रूप से स्वीकृत है कि अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान को अपने प्रारम्भिक वर्षों में उपनिवेशी प्रशासकों द्वारा एक उपयोगी मदद के रूप में देखा जाता था, जो वहाँ के मूल निवासियों के प्रशासनिक प्रबंधन एवं नियंत्रण को सुविधाजनक बनाती थी। यह भारत के परिप्रेक्ष्य में भी समान रूप से लागू होता था। अपने प्रारम्भिक वर्षों में मानवशास्त्रीय ज्ञान एक महत्त्वपूर्ण घटक हुआ करता था, जिसे कुख्यात रूप से 'कल्चरल टेक्नालजी ऑफ रूल' के नाम से जाना जाता है(डिर्क 2001:9)। आपको यह समझना चाहिए कि उपनिवेशी क्षेत्र एवं प्रभुत्त्व मात्र उत्तम श्रेणी की सैन्य तकनीक द्वारा ही संभव नहीं हो पाये अपितु सामाजिक एवं सांस्कृतिक हस्तक्षेपों तथा जोड़–तोड़ द्वारा भी यह संभव हो पाया जिसने उन्हे यहाँ की मूल आबादी पर राज करने एवं उनका शोषण करने में सक्षम बनाया। भारत में, उपनिवेशी सरकार द्वारा मानव विज्ञानियों की सेवाओं का उपयोग गणना,वर्गीकरण एवं जनगणना संचालनों के लिए किया गया। अपने समय के दो अत्यंत जाने–माने मानव विज्ञानी हेर्बेर्ट रिसले एवं जे. एच. हट्टन को क्रमशः 1901 एवं 1931 में भारत की जनगणना करने का नेतृत्त्व करने के लिए बुलाया गया (पूर्वोक्तः51)। इस सेवा के अलावा, मानव विज्ञानियों को उपनिवेशी प्रशासकों के प्रशिक्षण के लिए भी रखा जाता था (वान विलिजेन, 1993:25)। मानव विज्ञानियों ने उपनिवेशी सरकारों को आदिवासी क्षेत्रों में होने वाली बगावतों एवं विरोधों से निपटने के लिए भी परामर्श देने के काम किया।अनुप्रयुक्त नृवंशविज्ञान के बचाव में यह कहा जा सकता है कि मानवविज्ञानी और औपनिवेशिक सरकारों के बीच किसी भी प्रत्यक्ष सहयोग के कई उदाहरण नहीं थे। वहीं दूसरी ओर, मानव विज्ञान के उपयोग ने मानव विज्ञान को लोकप्रिय बना दिया। इसने आदिवादियों को प्राचीन लोग होने की अनुभूति में परिवर्तन लाने में तथा लोगों को 'उनकी श्रेष्ठता के रोब' के प्रति आकर्षित करने में सहायता प्रदान की। कालांतर में इसने उपनिवेशवाद को 'असभ्य को सभ्य बनाने' के लिए नैतिक तर्कसंगति को चुनौती दी।

ग) अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान एवं बहुविषयी आंदोलन

1929–30 के वर्ष को गंभीर आर्थिक मंदी,बाज़ारों के पतन होने,व्यवसायों के बंद होने, बेरोजगारी एवं लोगों की आर्थिक दुर्गति के लिए जाना जाता है। इस

कालावधि को आमतौर पर महा–आर्थिक मंदी के रूप में जाना जाता है। यह कालावधि व्यवसाय एवं उद्योग जगत में अधिक मानवतावादी दृष्टिकोण लेकर आई तथा इसने लोगों के द्वारा अनुभव किए जा रहे कष्टों एवं आर्थिक कठिनाइयों के प्रति अधिक संवेदनशीलता दिखाई। आर्थिक संकट उन तरीकों में परिवर्तन आने का कारण बना जिस तरीके से व्यवसाय एवं उद्योग अभी तक चल रहे थे। इसने औद्योगिक प्रबंधन में मानव सम्बन्धों पर ध्यान केन्द्रित करने का पक्ष रखा तथा उत्पादन के लिए आवश्यक अन्य प्रकृतिक संसाधनों की तुलना में मनुष्यों को अथिक महत्वपूर्ण संसाधन के रूप में पहचान दी। हालांकि, मानवविज्ञानियों द्वारा नृजातीय अध्ययनों के एक भाग के रूप में आदिवासियों के साथ मानव सम्बन्धों के मामले में निपटने की विशेषज्ञता ने मानव विज्ञानियों को नवीन विकास प्रक्रिया के साथ अपने आप को जोड़ने में समर्थ बनाया। उन्होंने इन नई चुनौतियों का भी दृढ़ता से समाधान किया और यह वास्तविक समस्याओं के साथ मानवविज्ञानी की भागीदारी की शुरुआत का प्रतीक है। 1930 के दशक में डब्लू. लोएड वार्नर, फ्रेड रिचर्डसन एवं इलियट चैपल जैसे मानव विज्ञानी हुए जिन्हे मानव सम्बन्धों एवं औद्योगिक प्रबंधन पर पहले से काम कर रहे बहुविषयी दलों में जोड़कर देखा जा सकता है।इलियट ने इस नवीन संलिप्तता को *इंजीनियरिंग एंथ्रोपोलोजी* का नाम दिया (बेनेट्ट 1996:27)। यह वह प्रारंभिक शुरुआत थी जो बाद में अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान के एक महत्वपूर्ण केंद्र के रूप में उभरी। यह महसूस किया जा रहा था कि समस्या का कोई एक कारण नहीं है। सामाजिक समस्याओं को हल करने के लिए बहु–विषयक दृष्टिकोण का की आवश्यकता बढ़ गई और अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान भी इस बहु–विषयक टीम का हिस्सा बन गया। यह वह सूत्र था जिसने आने वाले दिनों में बाद में परिवर्तन को अधिक सुविधाजनक बनाने और मानव कल्याण को बढ़ाने से संबंधित अनुशासन के रूप में अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान के विकास का नेतृत्व किया (पूर्वोक्तः 39)।

घ)अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान एवं समस्या उन्मुख शोधकार्य

यह कालावधि सरकार और अन्य एजेंसियों द्वारा पेश की गई समस्याओं को हल करने में मानवविज्ञानी की भागीदारी को चिह्नित करती है। खाद्य राशनिंग और भोजन विकल्पों के प्रभाव, राष्ट्रीय नैतिकता, जनमत सर्वेक्षण, शत्रु राष्ट्रों के नागरिकों के राष्ट्रीय चरित्र अध्ययन आदि सहित कई मुद्दों पर काम करने के लिए बड़ी संख्या में मानवविज्ञानी कार्यरत थे। 1946 में जापानियों के राष्ट्रीय चरित्र को दर्शाते हुए रूथ बेनेडिक्ट द्वारा किया गया प्रसिद्ध काम, *द क्रिसेंथेमम एंड द स्वोर्ड* प्रकाश में आया। मार्गरेट मीड जैसे कुछ प्रसिद्ध मानवविज्ञानी थे जिन्होंने राज्य को युद्ध से उत्पन्न सामाजिक संकटों से निपटने में मदद की। इसी समय के आसपास कृषि विभाग ने भी ग्रामीण विकास की समस्याओं पर काम करने के लिए मानवविज्ञानियों की सेवाओं का लाभ उठाया। वर्ष 1941 में सोसाइटी फॉर अप्लाइड एंथ्रोपोलोजी ने अनुप्रयुक्त मानवविज्ञानियों के लिए एक औपचारिक व्यावसायिक संस्था की स्थापना की जिसकी शुरुआत संयुक्त राज्य ने एक कथित उद्देश्य 'मानव व्यवहार के सिद्धांतों के अध्ययन तथा समसामयिक मुद्दों एवं समस्याओं के लिए इन सिद्धांतों के उपयोग' के साथ की। यह वही अवस्था थी जिसमें अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान की एक सुधारात्मक विज्ञान के रूप में पुष्टता के साथ स्थापना की (पूर्वोक्त, 29)।

च) उत्तर–औपनिवेशिक चरण या विकास चरण

द्वितीय विश्व युद्ध के अंत को उपनिवेशवाद के अंत तथा नए स्वतंत्र देशों के अस्तित्व में उभर कर आने के रूप में चिन्हित किया जाता है। राष्ट्र–निर्माण, अंतर्राष्ट्रीय सहयोग, आर्थिक वृद्धि के विकास और गरीबी को दूर करने तथा जीवन की गुणवत्ता में सुधार के साथ एक नई विश्व व्यवस्था अस्तित्व में आई। युद्ध–पूर्व युगीन मानव विज्ञान की पैतृक वैज्ञानिकता एवं राज्य केन्द्रित स्वरूप की आलोचना की गयी तथा एक अधिक मानव–केन्द्रित (बजाय समस्या–केन्द्रित) संलिप्त अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान की आवश्यकता का अनुभव किया गया। जैसा कि सोलटैक्स ने प्रसिद्ध ढंग से कहा, मानव विज्ञानियों को मनुष्यों को केवल विषयवस्तु के रूप में नहीं देखना चाहिए, अपितु अपने अध्ययन के उद्देश्यों के रूप में भी देखना चाहिए(1964:251)।इस चरण में अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान में कई विकास हुए और क्षेत्र को फिर से परिभाषित करने का प्रयास किया गया। उदाहरण के लिए, सोल टैक्स ने एक्शन एंथ्रोपोलॉजी (क्रियात्मक मानवविज्ञान) शब्द गढ़ा। क्रियात्मक मानवविज्ञानी प्रत्यक्ष रूप से समुदाय के साथ मिलकर समुदाय की समस्याओं को सुलझाने तथा उनके जीवन स्तर को सुधारने का काम करते थे। सोल टैक्स का मानना था कि जो लोग सांस्थानिक प्रणाली के अंतर्गत काम कर रहे हैं, चाहे वह सरकारी हो अथवा गैर–सरकारी संस्थाएं, वह अपनी संस्थागत बाध्यताओं द्वारा अत्यधिक घिरी हुई हैं। इसके कारण मात्र विनियमित संलिप्तता ही संभव थी। उन्होंने मानवविज्ञानियों से अधिक प्रत्यक्ष कार्रवाही की वकालत की तथा इसे क्रियात्मक मानव विज्ञान का नाम दिया। इस चरण की एक सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण विशेषता थी विकास के क्षेत्र में मानव विज्ञान का उपयोग। विकास के आर्थिक प्रतिमानों एवं आधुनिकीकरण सिद्धान्त की आलोचना के बाद, विकास का केंद्र मानवीय, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं सतत विकास की ओर बदल गया। विकास में गैर–मानव से मानवीय कारक के इस बदलाव ने विकास अध्ययन के क्षेत्र में मानवविज्ञानियों की भागीदारी को एक नए युग से जोड़ा। और वे योजना, क्रियान्वयन, मूल्यांकन से लेकर कार्यक्रम समीक्षा तक विकास के सभी पहलुओं से जुड़ गए। मानव विज्ञान की भूमिका इतनी अधिक अनिवार्य हो गयी कि कोई भी समुदाय आधारित विकास मानवविज्ञानियों की संलिप्तता के अभाव में सम्पूर्ण नहीं हो सकता था। इस चरण में सामाजिक समस्याओं एवं सामाजिक मुद्दों के साथ अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान की प्रत्यक्ष संलिप्तता अधिक सक्रिय रूप में देखी गयी।

अपनी प्रगति जांचें

3) अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान में विकास के चार विभिन्न चरण क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

4) औपनिवेशिक भारत में जनगणना का नेतृत्व करने वाले मानवविज्ञानी कौन थे?

.....

.....

.....

.....

.....

5) प्रसिद्ध पुस्तक *द क्रिसेंथेमम एंड द स्वोर्ड* किसने लिखी है?

.....

.....

.....

.....

.....

6) क्रियात्मक मानवविज्ञान की संक्षेप में चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

1.3 भारत में अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान

क) एक औपनिवेशिक सहायक के रूप में अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान

भारत में मानव वैज्ञानिक शोधकार्य को एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बेंगाल के समय से देखा जा सकता है, जिसकी स्थापना प्राच्य विद्या विशारद एवं भारतविद जज सर विलियम जोन्स द्वारा समुदायों पर व्यवस्थित ढंग से नृजातीय अध्ययनों को करने के लिए की गयी। जैसा कि पहले उल्लेखित किया जा चुका है, भारत में मानवविज्ञान की शुरुआत एक औपनिवेशिक व्यवहारिक एथनोलॉजी के रूप में आदिवासियों एवं जातियों पर शोध करने एवं औपनिवेशिक सरकार के लिए जानकारी एकत्रित करके तथा उनके प्रशासन में सहायता प्रदान करने के लिए हुई। इनमें से अधिकांश कार्य यूरोपीय विद्वानों द्वारा किए गए थे जिनमें मिशनरी, प्रशासक, न्यायाधीश और सैन्य अधिकारी शामिल थे जो भारत में तैनात थे या जिनकी भारत में रुचि थी। इस काम के द्वारा प्राथमिक रूप से उन तथ्यों पर प्रकाश डाला गया जिनके माध्यम से प्रशासकों को संपत्ति की प्रणाली, भूमिधारण एवं इसके उत्तराधिकार को समझने में तथा उनके राजस्व संग्रहण को बढ़ाने में सहायता मिली (डिर्क 2001: 29)।हमने पहले देखा है कि कैसे उनके द्वारा किए अध्ययनों में लोगों में पायी जानेवाली विविधताओं,भेद, बाहरीपन,विभाजनों एवं वर्गीकरणों पर बल दिया ताकि बढ़ते राष्ट्रवाद को देशभर में फैलने से रोका जा

सके और बांटो और राज करो वाली औपनिवेशिक नीति को सुगम बनाया जा सके।

ख) भारतीय अनुप्रयुक्त मानवविज्ञानः स्वाधीनता–पूर्व युग

अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान को सही अर्थ में शरत चन्द्र रॉय (1871–1942) को समर्पित किया जा सकता है, जो भारतीय मानवविज्ञान के जनक हैं (गुहा 2018:18)। रांची में अभ्यासरत एक वकील के रूप में, वह *मुंडा, हो* एवं *ओरांव* जनजातिकी दुर्दशा से बहुत अधिक प्रभावित हुए, जो भूमि से संबन्धित समस्याओं को लेकर न्यायालय में उपस्थित हुए थे। उनके साथ औपनिवेशिक अधिकारियों द्वारा घृणा एवं तिरस्कार के साथ बड़ा ही अमानवीय व्यवहार किया गया। एससी रॉय ने कानूनी मामलों में उनकी मदद करना शुरू कर दिया और अक्सर उनके और न्यायाधीशों के बीच संवाद स्थापित किया (पूर्वोक्त:18)। इनमे से अनेक आदिवासी जब कभी वह भूमि हस्तांतरण मामलों के लिए शहर में आए, उनके यहाँ ठहरे भी। एस. सी. रॉय का दृष्टिकोण लगभग सोलटैक्स के दृष्टिकोण के समान ही था, तथा उनकी ही तरह वे भी हस्तक्षेप एवं कानूनी मामलों में आदिवासियों की मदद करते थे। हालांकि एस. सी. रॉय मानव विज्ञान में औपचारिक रूप से प्रशिक्षित नहीं थे, परंतु श्रेष्ठ मानव विज्ञानियों के संपर्क में थे जैसे कि उनके समय के जेम्स फ्रेज़र ए डबल्यू.एच.आर, रिवेर्स तथा बाद में उन्होने रांची एवं कोलकाता विश्वविद्यालयों में व्याख्यान भी दिये। 1921 में उन्होने पहली औपचारिक मानव वैज्ञानिक पत्रिका *मैन इन इंडिया* की शुरुआत की (पूर्वोक्त 20)।

अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान में अधिक प्रत्यक्ष रूप से योगदान तारक चन्द्र दास (1898–1964), ने दिया, जो कि एक प्रशिक्षित इतिहासकार थे, उन्होने कलकत्ता विश्वविद्यालय में मानव विज्ञान पढ़ाया भी। उन्होंने 1941 की इंडियन साइन्स काँग्रेस में मानव वैज्ञानिक अधिवेशन के अध्यक्षीय सम्बोधन में इस विषय के बारे में बात की कि कैसे सांस्कृतिक मानवविज्ञान व्यक्ति एवं राष्ट्र की सेवा में उपयोगी हो सकता है। उन्होंने इस बारे में बात की कि कैसे सांस्कृतिक मानवविज्ञान का ज्ञान शिक्षा, व्यापार, कानूनी अध्ययनों, कृषि एवं प्रशासन के लिए महत्त्वपूर्ण है(गुहा 2011:260)। सांस्कृतिक कारक एवं उन्हे समझने के लिए किसी मानव विज्ञानी की विशेषज्ञता किस प्रकार महत्त्वपूर्ण हैं जैसे विचारों पर बल देते हुए वह अपने समय काफी आगे की सोच रखते थे।सामाजिक समस्याओं की आनुभविक समझ रखने पर बल देने वाली उनकी सोच का प्रतिबिंब उनके अग्रणी काम के द्वारा 1940 के बंगाल के अकाल के दौरान तथा बंगाल प्रदेश की शहरी एवं ग्रामीण आबादी पर इसके प्रभाव के रूप में सर्वोत्तम ढंग से देखा गया। उन्होने 1943 में अपने विद्यार्थियों एवं अन्य कर्मचारियों के साथ मिलकर अकाल के कारणों एवं बेसहारा शहरी एवं ग्रामीण आबादी पर पड़ने वाले प्रभाव को समझने के लिए वंशावली, केस अध्ययन, प्रश्नावलियों एवं साक्षात्कार आधारित परंपरागत नृजातीय विधियों का उपयोग करवास्तविक नृजातीय क्षेत्रीयकार्य का निष्पादन किया। यह रिपोर्ट अस्थायी सरकार को सौंपी गयी तथा इसके द्वारा की गयी अनेक सिफ़ारिशों को उस आयोग द्वारा अपना लिया गया जो अकाल के बारे में तथा भविष्य में उनसे बचने के उपायों के बारे में जांच–पड़ताल कर रहा था। उनका सम्पूर्ण लेख *बेंगाल फमाइन* में 1949 में प्रकाशित हुए था, जिसे कलकत्ता

विश्वविद्यालय ने प्रकाशित किया था। इस पुस्तक में उपलब्ध आंकड़ों को कालांतर में अमर्त्य सेन, जो कि एक प्रसिद्ध अर्थशास्त्री हैं,द्वारा अपने महत्त्वपूर्ण अध्ययन *पोवेर्टी एंड फमाइन* में उपयोग किया था (पूर्वोक्त 251)। यह काम भारत में मानवविज्ञान के नीति निहितार्थ एवं भविष्य के अर्थ में उदाहरणात्मक था।

ग) स्वातंत्र्योत्तर युग में अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान

यह स्वातंत्र्योत्तर युग ही था जिसमें व्यवहारिक मानवविज्ञान ने समाज में हाशिये पर रहने वाले वर्गों के विकास लक्ष्यों को आगे बढ़ाते हुए राष्ट्र निर्माण में योगदान देने वाले एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र के रूप में उभर कर आया।इसका केंद्र बिन्दु आदिवासी एवं ग्रामीण विकास था। अंग्रेजों ने आदिवासी समुदायों की सुरक्षा एवं संरक्षण के लिए एकांत या अलगाव नीति का अनुसरण किया। अंग्रेज़ी–राज के विरुद्ध 1857 के विद्रोह ने भारतीय जनता के बड़े वर्ग के प्रति औपनिवेशिक सरकार को सतर्क एवं शंकाकुल बना दिया। वह नहीं चाहते थे कि राष्ट्रवाद की उमड़ती लहर आदिवासी समुदायों को अपने साथ बहा ले जाए और साथ ही वह आदिवासी क्षेत्रों से निरंतर प्रकृतिक संसाधनों का निस्सारण एवं शोषण भी करना चाहते थे। इन दोनों बातों को ध्यान में रखते हुए उन्होंने आदिवासी समुदायों के प्रति एकांत एवं निषिद्धता के माध्यम से संरक्षण देने वाली एक नीति का सृजन किया।स्वतन्त्रता मिलने के साथ ही एकांत की यह नीति अनुपयोगी सिद्ध हुई तथा आदिवासियों के हित में भी नहीं थी। आदिवासी लोग भारतीय सभ्यता का एक अभिन्न अंग थे तथा राष्ट्रीय निर्माण में उन्हे सम्मिलित किया जाना था। इस उद्देश्य के साथ भारतीय सरकार ने संस्कृति एवं लोगों की पहचान को बचाए रखने के लिए विकास एवं सुरक्षा उपायों द्वारा संरक्षणवाद के माध्यम से दोहरे दृष्टिकोण की परिकल्पना की। अतः अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान ने इस दृष्टिकोण के अंतर्गत एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

घ) अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान एवं सरकारी संस्थाएं

उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से ही मानव वैज्ञानिक सरकार को जनगणना, विविधता एवं भारतीय लोगों के वर्गीकरण से संबन्धित मुद्दों के बारे में परामर्श दे रहे थे। जैसा कि पहले भी उल्लेख किया जा चुका है कि हर्बर्ट रिसले एवं जे. एच. हट्टन दोनों ही प्रशिक्षित मानव विज्ञानियों ने क्रमशः 1901 एवं 1931 की जनगणना का नेतृत्त्व किया, जिसने भारत के लोगों के प्रशासनिक वर्गीकरण में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। ब्रिटिश शासन के अंत में उन्होंने 1945 में भारत के भारतीय मानवविज्ञान सर्वेक्षण की स्थापना की, जिसके पहले निदेशक के रूप में बी.एस गुहा और आदिवासी मामलों पर सरकार को सलाह देने के लिए वेरियर एल्विन इसके उप निदेशक थे। स्वतंत्रता के बाद के युग में संगठन ने जनजातीय मुद्दों के साथ–साथ भारतीय आबादी की जैव–सांस्कृतिक विविधता से संबंधित अन्य मामलों पर सरकार को सलाह देने में एक प्रमुख भूमिका निभाई। वर्तमान में यह एकल सरकारी सबसे बड़ी मानव वैज्ञानिक संस्था है, जिसके आठ प्रादेशिक केंद्र देश के विभिन्न भागों में अवस्थित हैं। आदिवासी आधारित अध्ययनों को करने के लिए एंथ्रोपोलोजिकल सर्वे ऑफ इंडिया के अलावा राज्य स्तर पर आदिवासी अनुसंधान संस्थानों के नेटवर्क भी हैं। इनकी स्थापना 1953 में प्रथम पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत आदिवासी समुदायों के बारे में जानकारियों के अभाव को कम करने तथा इस जानकारी को नीति निर्माण करने वालों तक पहुँचाने के

लिए की गयी थी। वर्तमान में भारत में विभिन्न राज्यों में आदिवासी संस्कृतियों एवं त्यौहारों को बढ़ावा देने के लिए गतिविधियां, कार्यक्रम इत्यादि का निष्पादन करने के लिए 25 केंद्र उपलब्ध हैं।वह आदिवासी क्षेत्रों में नियुक्त किए गए सरकारी कर्मचारियों के लिए संवेदीकरण कार्यक्रमों का भी आयोजन करते रहते हैं। वे जनजातीय क्षेत्रों में तैनात सरकारी अधिकारियों के लिए संवेदीकरण कार्यक्रम भी चलाते हैं। मानवविज्ञानी अनुसूचित जनजाति और अनुसूचित जाति आयोगों, रजिस्ट्रार जनरल और जनगणना आयुक्त के कार्यालय, संस्कृति मंत्रालय आदि सहित कई अन्य सरकारी निकायों से भी जुड़े हुए हैं। इसके अतरिक्त मानवविज्ञानी सार्वजनिक स्वास्थ्य के मुद्दों पर शोध करने के लिए भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद और राष्ट्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण संस्थान जैसे स्वास्थ्य अनुसंधान संगठनों से भी जुड़े हुए हैं।

च) अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान तथा योजनबद्ध परिवर्तन एवं ग्रामीण विकास

इस मामले में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योगदान श्यामा चरण दुबे (1922–1996) का रहा। एस. सी. दुबे अपने समय के मुख्य मानवविज्ञानी थे तथा प्रशासन के साथ साथ शिक्षा में भी महत्त्वपूर्ण पदों पर रहे। उन्होने सामुदायिक विकास कार्यक्रम का नेतृत्त्व किया, जिसकी शुरुआत 1952 में प्रथम पंचवर्षीय योजना के एक भाग के रूप में हुई, जिसे भारतीय योजना आयोग ने एक कार्यक्रम के रूप में शुरू किया।उन्होंने सामुदायिक विकास कार्यक्रम का नेतृत्व किया, जिसे 1952 में पहली पंचवर्षीय योजना के एक भाग के रूप में शुरू किया गया था, जिसे भारत के योजना आयोग ने एक कार्यक्रम के रूप में शुरू किया था और इसे सामुदायिक विकास कार्यक्रम के रूप में नामित किया था ताकि ग्रामीण परिवर्तन और भागीदारी के माध्यम से भारत में बेहतर जीवन का विकास हो सके और नियोजित परिवर्तन लाया जा सके। ए. आर. देसाई के अनुसार यह कार्यक्रम इस अर्थ में भिन्न था कि यह "परोपकारी भाव से दूर हटते हुए, इसने ग्रामीणों में एक मनोवैज्ञानिक परिवर्तन पैदा करने के लिए.... सामुदायिक विकास आंदोलन को लक्षित किया.....उनमें नयी अभिलाषाएं,नये प्रोत्साहन, नयी तकनीकें तथा एक नया आत्मविश्वास पैदा हुआ ताकि मानव संसाधन के इस विशाल भंडार को राष्ट्र के उन्नत हो रहे आर्थिक विकास के लिए उपयोगी बनाया जा सके" (देसाई 1953: 53)। एस.सी. दुबे ने सामाजिक समस्याओं को हल करने में सहयोगी अनुप्रयुक्त अनुसंधान का बीड़ा उठाया। उन्होंने विकास में मानव संसाधन की भूमिका को उजागर करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

छ) भारत में अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान की भूमिका में विस्तार

भारत में व्यवहारिक मानवविज्ञान की भूमिका में सदैव विस्तार ही होता रहा है। जैसा कि वैन विलिजेन (2002:13) ने पहचान की है, भारत में व्यवहारिक मानव विज्ञानियों का निम्नलिखित उपयोग के तीन क्षेत्रों में सफलतापूर्वक योगदान रहा है। वह हैं:

जानकारी के स्तर पर: यह अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान की परंपरागत भूमिका रही। व्यक्तिनिष्ठ, सहभागी, बहुव्रीहि तथा कर्मकर्ता आधारित समझ पर बल देते हुए मानवविज्ञानी किसी भी विषय पर गुणवत्तापूर्ण जानकारी उपलब्ध करवाने के लिए सर्वाधिक निपुण रहे। वह प्रायोजक संस्थाओं के स्थानीय संकल्पनाओं को

परिवर्तित करने में भी अत्यधिक सफल रहे हैं ताकि वह उनके महत्त्व को समझने में समर्थ हों। वह भागीदारी आधारित मूल्यांकन अध्ययनों, आवश्यकता मूल्यांकन एवं मूल्यांकन में भी दक्ष होते हैं, जिसके कारण नीति निर्माण करने वालों को महत्त्वपूर्ण प्रतिपुष्टियाँ उपलब्ध हो पायी हैं।

नीति निर्माण के स्तर पर:नीति निर्माण में मानवशास्त्रीय विशेषज्ञता के अनुप्रयोग और नीति विज्ञान के रूप में मानवविज्ञान ने 1990 के दशक से तेजी से प्रगति की है। इसके बाद की अवधि में नीति–निर्माण के क्षेत्र में तेजी से बदलाव देखा गया जिसमें वैश्वीकरण, सामाजिक और पर्यावरणीय मुद्दे नीति विज्ञान पर हावी हो गए। जिसके कारण सतत विकास में समानता और न्याय के मुद्दे, संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम तथा वैश्विक और स्थानीय ताकतों की गतिशीलता के सभी पहलुओं पर प्रभाव पड़ा। इस बदलते डोमेन के नीति निर्माण में मानवविज्ञानी की भूमिका और महत्वपूर्ण हो गई है और कई मानवविज्ञानियों ने भारत में नीतियों को आकार देने वाले थिंक टैंक के साथ काम करना शुरू कर दिया।

क्रियात्मक स्तर पर:व्यवहारिक मानवविज्ञानी प्रत्यक्ष हस्तक्षेप के स्तर पर भी अत्यधिक सक्रिय रहे हैं। कार्यक्रमों के निष्पादन में मानव विज्ञानियों की भूमिका बढ़ते क्रम में रही है। वह स्थानीय लोगों के साथ वकालती समूहों के रूप में भी सहयोग करते रहे हैं। लोगों के साथ काम करते हुए इनमें से अनेक स्वयं–सहायता समूहों के प्रशिक्षण से जुड़े हुए हैं।

पिछले कुछ दशकों में व्यवहारिक मानवविज्ञानी अध्ययनों के नवीन क्षेत्रों में आ पहुंचे हैं जैसे जटिल संस्थाओं के प्रबंधन एवं अध्ययन में जैसे कि सार्वजनिक क्षेत्र, अस्पताल, इत्यादि। इस संदर्भ में 1968 में एन. आर. शेठ द्वारा किए गए कार्य *सोशल फ्रमेवर्क ऑफ इंडियन इंडस्ट्री* तथा डी. पी. सिन्हा द्वारा किए गए कार्य *कल्चर चेंज इन एन इंटर–ट्राइबल मार्केट* द्वारा दर्शनीय योगदान दिया गया था, जो कि व्यवहारिक मानवविज्ञानक्षेत्र कें कुछ प्रारम्भिक कामों में से एक हैं। डी. पी. सिन्हा शहरी मानवविज्ञान क्षेत्र के प्रणेता थे तथा कलकत्ता शहर पर आधारित उनका लेख शहरी क्षेत्रों एवं शहर में रहने वालों की समस्याओं के अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान पर अग्रणी आलेखों में से एक है(सरन 1976:221)।

वर्तमान परिदृश्य

अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान समसामयिक भारत में रोजगार की नयी संभावनाओं के साथ एक जीवंत विषय है। अनुप्रयुक्त मानवविज्ञानी उन सभी भूमिकाओं में संलिप्त हैं जिनकी परिकल्पना वान विलिगन ने की थी(1993:7)। वह नीति शोधकर्ता, मूल्यांकनकर्ता, प्रभाव आंकलनकर्ता, योजनाकार, शोध विश्लेषक, वकालत प्रशिक्षक, एडवोकेसी ट्रेनर (वकालत प्रशिक्षक) सांस्कृतिक समन्वयक, प्रशासक, परिवर्तनप्रतिनिधि एवं चिकित्सक की भूमिकाओं में कार्यरत हैं। यदि पिछली शताब्दी में मानवविज्ञान विचित्र वस्तुओं का अध्ययन था, तो इस शताब्दी में शहरी समस्याओं जैसे प्रदूषण, गरीबी, आपदा प्रबंधन, सतत विकास, जीवनशैली आधारित बीमारियाँ, सार्वजनिक स्वास्थ्य मुद्दे, पारिस्थितिक पतन, कृषिक्षेत्र की परेशानियाँ,व्यवसाय एवं उद्योग के सीमावर्ती मुद्दों में मानव विज्ञान की संलिप्तता बढ़ेगी तथा इन क्षेत्रों तथा अन्य में अपनी उपस्थिती का अनुभव करवाएगी।

7) भारत में अपनी शुरुआत से लेकर वर्तमान समय तक अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान की भूमिका की विवेचना कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

8) भारत में अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान के उपयोग के तीन क्षेत्र कौन से हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

9) सामुदायिक विकास कार्यक्रम का नेतृत्व करने वाले मानवविज्ञानी का नाम बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

10) भारत में व्यवहारिक (अनुप्रयुक्त) मानवविज्ञानी किन व्यवसायों से जुड़े हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

1.4 सारांश

यह इकाई आपकी उस यात्रा की शुरुआत भर है जो अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान की दुनिया की आवश्यकता पर बल देती है। यह हमें अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों के प्रति बेहतर समझ बनाने के लिए तैयार करती है तथा यह बताती है कि कैसे मानवविज्ञानी अपने प्रशिक्षण के आधार पर वास्तविक स्थानीय एवं वैश्विक मुद्दों से निपटने के लिए तैयार होते हैं। इकाई आपको अनुप्रयुक्त मानवविज्ञान के विकास की एक ऐतिहासिक रूपरेखा तथा इसके विभिन्न दशकों से गुजरते हुए लोगों की

समस्याओं को हल करने की विशेषज्ञता और भारत में एक ठोस क्षेत्र के रूप में इसके उद्भव को समझाती है।

1.5 संदर्भ

Bennet, J. W. (1996). "Applied and Action Anthropology: Ideological and Conceptual Aspects". *Current anthropology*.Volume 36, February, Supplemantry. pp. 23-54 .

Desai A.R. (1958). "Community Development Projects—A Sociological Analysis".*Sociological Bulletin*, Vol. 7, No.2 , pp. 152-16. Sage Publications, https://www.jstor.org/stable/42864541Accessed: 12-04-2020 12:35 UTC.

Ferraro G. and SussanAndreatta. (2014). *Cultural Anthropology: An Applied Perspective* .Stamford: Cengage Learning .

Foster, George M. (1969). *Applied Anthropology*. Boston: Little Brown.

Guha,Abhijit. (2018). *In search of nationalist trends in Indian anthropology: Opening a new discourse*. Occasional Paper62.Institute of Development Studies, Kolkata.

Ingold, Tim. (1994). "General Introduction".*Companion Encyclopedia of Anthropology*.Edited by Tim Ingold. London: Routledge.

Mead Margaret. (I975). "Discussion" in *Anthropology and society*.Edited by Bela C. Maday, Washington, D.C.: Anthropological Society of Washington.

Mitra, R.P. (2011). "On the Practice of Anthropology".In *Anthropology in India*.Edited by Saxena.H.S., Vinay K. Srivatava et al. New Delhi: Serial Publication pp 128-146.

Nollan, R.W.N. (2018). "Applied Anthropology".*The International Encyclopedia of Anthropology*.Edited by Hilary Callan. NewYork: JohnWiley& Sons, Ltd.

Pink, S. (2006)."Application of Anthropology". In S. Pink S. (ed.)*Application of Anthropology as Professional Anthropology in the Twenty-First Century* New York: Berghahn Books.

O'Driscoll, Emma. (2009). "Applying the 'UncomfortableScience': The Role ofAnthropology in Development". *Durham Anthropology Journal.*Volume 16(1) 13-21.

Saran G. (1976)."Status of Socia Culturalanthropology in India". *Annual Review of Anthropology* pp 209-225.

Sinha, D. P. (1968).*Culture Change in an Inter-tribal Market* . Bombay:Asia Publication.

Sheth , N . R. (1968).*The Social Framework of an Indian Factory*.Bombay: Oxford University Press.

Tax, Sol. (I964)."The uses of anthropology," in *Horizons of Anthropology*.Edited by Sol Tax, pp. 248-58. Chicago: Aldine.

Van Willigen, John. (2002). *Applied Anthropology: An Introduction*. Westport: Bergin & Garvey.

1.6 आपकी प्रगति की जाँच के लिए उत्तर

1) अनुभाग1.1देखें।

2) अनुभाग1.1देखें।

3) अनुभाग1.2देखें।

4) अनुभाग 1.2 में पैराग्राफ 3 देखें।

5) अनुभाग 1.2में पैराग्राफ 5 देखें।

6) अनुभाग 1.2में पैराग्राफ 6 देखें।

7) अनुभाग1.3देखें।

8) अनुभाग 1.3में बिन्दु **छ)**को देखें।

9) एस. सी. दुबे

10) भारतीय मानवविज्ञानी विभिन्न रूप सेनीति शोधकर्ता, मूल्यांकनकर्ता, प्रभाव आंकलनकर्ता, योजनाकार, शोध विश्लेषक, एडवोकेसी ट्रेनर (वकालत प्रशिक्षक), सांस्कृतिक समन्वयक, प्रशासक, परिवर्तन प्रतिनिधि एवं चिकित्सक की भूमिकाओं में कार्यरत हैं।